अस्मिता

अपने जीवन के बीस वसंत सुनंदा ने माँ के आँचल में बिताए थे। विदाई के समय उन्हें खोंयछे में बाँधते हुए माँ ने कहा था –''ये बीस वसंत तुम्हें हर पतझड़ में नया जीवन देंगे। धरोहर की तरह इन्हें सहेज कर रखना।'' और सुनंदा ने बीस वसंतों से भरी पोटली को माँ का अंतिम देय समझ कर आज तक सँभाले रखा है। पतझड़ के रूखे बयार से फटी अपने जीवन की बिवाइयों को वह उस पोटली के वासंती फाहों से सहलाती है – उसे चैन पड़ जाता है।

सुनंदा ने सोचा था जब उसकी बेटी ब्याहकर पराये घर जाने लगेगी तो वह भी उसके खोंयछे में मायके के सभी वासंती दिनों को सहेज कर बाँध देगी ताकि मौसम के कठोर प्रहार को सहते वक्त खोंयछे का एक–एक अक्षत फूल बनकर उसके ऊपर बिछ जाए। उसकी सुगंध उसके पोर–पोर में उतर जाए, लेकिन सुनंदा अवाक् रह गई जब उसकी बेटी शालिनी ने विदाई के दिन अपने खोंयछे की गाँठ ढ़ीली करके सारे अक्षत, फूल–दूब–हल्दी और बताशे माँ की गोद में डाल कर कहा –''नहीं माँ, खोंयछे में वसंत देकर मुझे पतझड़ मोल लेने को मत कहो – मैंने बचपन से देखा है इस घाटे के सौदे में किस तरह तिल–तिल कर तुमने अपना सबकुछ होम किया है – बदले में तुम्हारे हिस्से क्या आया ? यह अस्तित्व आहुति का भस्मकुण्ड ही ना ! उसी भस्मकुण्ड के नीचे एक दबी चिन्गारी हूँ मैं, तुम मुझे राख बनने का संस्कार मत सौंपो माँ, आर्शीवाद दो कि नए जीवन में एक संवेदनशून्य वस्तु नहीं – व्यक्ति के रूप में मैं अपनी अहमियत बना सकूँ –– ''

सुनंदा एकटक बेटी का मुँह देखती रह गई। उसकी बेटी पिंजरे वाली मुनिया बनने को तैयार नहीं। उसकी आँखों में उन्मुक्त आकाश का सौंदर्य सपना बनकर पल रहा है।

सुनंदा कैसे कहे उससे कि आकाश बाँहों में भरने की चीज नहीं, इसलिए किसी औरत के सपने में उसका आना कभी शुभ नहीं होता।

''सारा आकाश का भ्रम एक मरीचिका है शालू – उसके पीछे मत जा – मत जा मेरी बच्ची।'' सुनन्दा की आवाज हिचकियों में घुट कर रह गई। आशंकित हृदय से वह पराये घर जाती बेटी को देखती रही – उसके कलेजे पर कोई वजनी पत्थर बैठ गया था।

❐ ❐ ❐

''शालिनी, मेरी कमीज के बटन टूटे हैं – पहले इन्हें टाँको भई !''

''मेरे मोजे नहीं मिल रहे हैं – ढूढ़ो जरा !''

''रूमाल तो तुमने धोये ही नहीं, कभी किसी चीज का खयाल नहीं रखती, अजीब औरत हो तुम भी !''

''यह रोज–रोज क्या तुम एक ही तरह का सर्वोदयी खाना बना कर रख देती हो – मुझसे नहीं खाया जाता यह घास–पात, हटाओ इसे !''

''ओफ, शालिनी, मैंने कितनी बार कहा है तुमसे, तुम्हारा यह नाच गाने का शौक मुझे बिलकुल पसंद नहीं है। आखिर अब रियाज करके तुम करोगी क्या ? माना कि राष्ट्रीय स्तर की नृत्य प्रतियोगिता में तुम अव्वल आई हो, पर मत भूलो कि अब तुम एक ऑफिसर की पत्नी हो – किसी साधारण घर की जरूरत मंद लड़की नहीं। मैं तुम्हें कहीं प्रोग्राम देने स्टेज पर नहीं उतरने दूँगा – इसे कान खोलकर सुन लो और अपने ये रियाज–वियाज बंद करो। ''

''सुनो शालू ! आज शाम मैंने 'बॉस' को डिनर पर बुलाया है। तुम्हें तो पता है, मेरे प्रोमोशन का सारा कुछ उन्हीं पर निर्भर है। थोड़ा अटेंशन लोगी तो बहुत कुछ हो सकता है। डोंट बी सीरियस यार, टेक इट इजि। जमाने की रफ्तार के साथ चलना सीखो।''

❐ ❐ ❐

शालू , अंततः तुम एक औरत हो – पुरुष की अनंत अपेक्षाओं और अनिवार्यताओं से बँधी एक जीवित वस्तु। तुम क्यों नहीं स्वीकारना चाहती इसे ? स्त्री का अस्तित्व उस पतंग की तरह है, जिसकी डोर खींचने या ढ़ील देने वाला पुरुष उसके उड़ने की सामर्थ्य को हमेशा अपने नियंत्रण में रखता है। पर कटे पक्षी की नियति को लेकर जीती है स्त्री। इसे चाह कर भी नहीं नकार सकती तुम।

मेरे साथ आओ और हर घर में झाँककर देखो – स्त्री सबसे पहले चूल्हे में जलती मिलेगी – बहुत सहज और शांत भाव से मुस्कुराती हुई। जलती हुई औरत हँसती क्यों रहती है – जानती हो शालू ?

उधर देखो – किसी सरनेम कवर पृष्ठ को अपने ऊपर लपेट कर कितनी खुश और तुष्ट है औरत। पूरी की पूरी दुनिया उसकी बाँहों में है – इसी घर के भीतर। सिन्दूर से भरी माँग, खनकती चूड़ियों से सजी कलाइयाँ और गले में झुलता मंगलसूत्र, माथे पर लरजता टीका, पैरों की गति को बाँधे रुनझुन पाजेब, जरीदार साड़ी की खूँट से बँधी मिलकियत के खजाने की चाबी और गर्भ में पलता संपूर्ण औरत होने का अहसास – और क्या चाहिए शालिनी – एक औरत को इससे अधिक और क्या चाहिए, बोलो ?

संपूर्ण औरत और खूँटे से बँधकर पागुर करती गाय सबको अच्छी लगती है शालू – तुम्हें क्यों नहीं लगती ?

❐ ❐ ❐

''अरे शालिनी ! इतनी बड़ी खुशखबरी और तुमने इसे सेलिब्रेट नहीं किया ? सुभाष कंपनी के मैनेजिंग डायरेक्टर हो गये और तुम चुपचाप इसे पचा गई, पर हम मानने वाले नहीं हैं, मेहता ने पूरे एपार्टमेंट में यह खबर फैला दी है। थोड़ी ही देर में देखना मिसेज भाटिया, मिसेज खन्ना, मिसेज राय और मिसेज वर्मा तुम्हारे पास पहुँच रही हैं – अभी–अभी उन्होंने मुझसे कहा है।''

मनीषा की बात अभी खत्म भी नहीं हुई थी कि पूरी की पूरी मंडली ड्राइंगरूम में समा चुकी थी। कुछ देर पहले वाली शालिनी क्षण–भर में कछुए के खोल के भीतर सिमट गई थी और उसकी जगह सहज, सौम्य, सुन्दर, सुघड़ आधुनिका मिसेज सुभाष देशमुख अपनी चिरपरिचित मुद्रा में सखियों के स्वागत में जुट गई थी। पूरी दोपहर एक अच्छी खासी टी–पार्टी चलती रही। गर्म पकौड़े और कॉफी की चुस्कियों के साथ सबने सण्डे का दिन भोज के लिए तय किया और एकजुट होकर मन पसंद व्यंजनों के मीनू भी बना डाले। मलाई कोफ्ते, कटहल दो प्याजा, परवल की भाजी, अनन्नास की चटनी, रायता और फ्रूट सलाद – सर्वसम्मति से पास हो गया यह मीनू। स्वीट्स में मिसेज भाटिया ने आइस्क्रीम सजेस्ट किया पर मिसेज राय ने रसमलाई की इच्छा जाहिर की। शालिनी ने बड़ी सहजता से दोनों की पसंद को अहमियत देते हुए हँसकर कहा –''दोनों ही तर आइटम्स हैं – जब तर ही होना है तो पूरी तरह क्यों नहीं। '' जोरदार ठहाका लगा था इस बात पर।

''वाह शालिनी ! क्या तर मिजाज पाया है तुमने भी।'' मनीषा उन्मुक्त कंठ से सखी की बड़ाई कर गई थी।

सबके विदा होने पर शालिनी कछुए की खोल से बाहर निकलकर खुद से पूछ रही थी –''मैनेजिंग डायरेक्टर की कुर्सी पर कौन बैठा है शालू ? सुभाष या तुम्हारा खंडित और लांछित अहं ?'' हवा के तेज झोंके से ड्राइंग रूम का खुला दरवाजा 'भड़ाम' की आवाज के साथ बंद हो गया। शालिनी अपने आहत अहं को कलेजे से लगाए उद्भ्रांत–सी उस बंद दरवाजे को एकटक देखती रह जाती है।

❐ ❐ ❐

''सुभाष'', शालिनी ने बहुत धीरे से उसे पुकारकर कहा – ''मैं तुमसे कुछ कहना चाहती हूँ ।''

''तो कहो न।''

''नहीं सुभाष, ऐसे नहीं बहुत गंभीर रूप से कहना चाहती हूँ, टेक इट सीरियस !''

''ओफ्फ ! डार्लिंग, क्यों बेवजह सीरियस मूड बनाना चाहती हो – आओ, मेरे करीब आकर मुझे प्यार करो – मेरे भीतर समा जाओ – मुझे अपने में लीन कर लो। अभी तुम बहुत सुंदर दीख रही हो – तुम पर प्यार आ रहा है शालू – मेरे पास आओ – नो सीरियस टॉक, नो सीरियस मूड, वॅनली लव इच अदर।''

सुभाष ने हाथ बढ़ाकर उसे अपनी ओर इतनी जोर से खींचा कि वह पूरी–की पूरी उसके ऊपर आकर गिरी। एक जानलेवा बंधन उसे पूरी तरह अपने गिरफ्त में लिए जा रहा था और वह लाचार और परेशान–सी उस कसान से बाहर आने के लिए छटपटा रही थी। वह कुछ कहना चाह रही थी पर उसके होंठ दाँतों के जबरदस्त आघात से सुन्न पड़ते जा रहे थे। उन होंठों पर लरजते शब्दों को कोई बूँद–बूँद कर पीता चला जा रहा था – शालिनी का कंठ भीषण प्यास से सूख रहा था और वह किसी की भूख और प्यास के बीच अपने को एक निर्जीव ग्रास की तरह महसूस रही थी –––

''शालिनी ! एक बात पूछूँ ? तुम इतनी ठंडी क्यों हो यार ? मैं जब भी तुम्हें स्पर्श करता हूँ तुम एकदम जड़ हो जाती हो – कोई उत्तेजना नहीं, कोई आवेग नहीं, कोई प्रतिक्रिया नहीं – जैसे अजंता एलोरा की प्रस्तर शिलाओं के बीच मैं अकेला अपना प्रणय निवेदन कर रहा होऊँ। ''

शालिनी एक फीकी हँसी हँसती है बस !

''शालिनी, मैं तुम्हें पूरी तरह पाना चाहता हूँ – रक्त की लय बनकर तुम्हारे सारे शरीर में दौड़ना चाहता हूँ। तुम्हारे संपूर्ण अस्तित्व को अपने में एकाकार करना चाहता हूँ, तुम्हारे भीतर मैं केवल 'मैं' होना चाहता हूँ शालिनी – केवल 'मैं'।''

सुभाष का 'मैं' शालिनी के भीतर एक खंजर की चुभन बनकर उतरता चला जाता है, जिसकी तेज धार से लहूलुहान होकर शालिनी का 'मैं' अकस्मात् चोट खाये विषधर की तरह फुफकार उठता है –

''सुभाष, यह 'मैं' केवल पुरुषों को विरासत में मिली चीज नहीं, स्त्रियों के भीतर भी यह भीगी लकड़ी की तरह रिसता और धुँआता रहता है। खुली हवा के रूख पर तुम हो इसलिए प्रज्वलित हो, पर गर्व न करो – तुम्हारा जलना राख की परिणति है और हमारा रिसना और धुँआना चिरंतन जीवित अग्नि का पर्याय। ''

''तुम यह क्या उजुल–फजुल बक रही हो शालिनी – मेरी समझ में तो कुछ भी नहीं आ रहा है।''

''यही तो दुःख की बात है सुभाष कि पुरुष जान बुझकर इसे समझना नहीं चाहता। अगर समझ जाए तो उसके अहं को ठौर कहाँ मिलेगा ?''

''नहीं शालिनी, मैं तुम्हें समझना चाहता हूँ क्योंकि मैं तुम्हें संपूर्णता में पाना चाहता हूँ।''

''सुभाष, किसी को पूर्णता में पाने का अर्थ जानते हो ?''

''हाँ शालिनी, तुम्हारे तन–मन और मस्तिष्क तीनों पर केवल मेरा अधिकार हो। इस रूप में मुझे मिलो, मैं यही चाहता हूँ। ''

''पर ये तीनों तो केवल प्रेम को समर्पित हो सकते हैं – किसी अधिकार को नहीं।''

''क्या मैं तुम्हें प्यार नहीं करता ?''

''नहीं सुभाष, तुम मुझपर प्यार नहीं – अधिकार जताते हो। तुम्हारे अधिकार की सीमा में मैं तुम्हारे लिए एक वस्तु के सिवा कुछ भी नहीं। तुम्हारी अनंत अपेक्षाओं और अनिवार्यताओं से बँधा मेरा तन अग्नि के सात फेरे लगाकर परंपरागत संस्कार के अधीन तुम्हारे लिए बार–बार समर्पित है पर मेरा मन और मस्तिष्क मेरा 'मैं' है सुभाष, जो तुम्हारे अधिकार के दायरे से पूर्णतः मुक्त है।''

सुभाष के 'अहं' को कहीं गहरी ठेस लगी। क्षण भर के भीतर वह सारा रस सूख गया और एक पुरुष का पुरुषत्व दहाड़ उठा –''मैंने तुम्हें घर दिया, ऐशो आराम की सारी सुविधाएँ दीं, सोसाइटी में मान सम्मान दिया, तुम्हारी हँसी, तुम्हारे आँसू पर अपना सब कुछ अर्पित किया और तुम्हारा 'मैं' आज मेरे ही विरुद्ध मोर्चा लेने को तत्पर है ? आखिर चाहती क्या हो तुम शालिनी ?''

''वह सब जो तुम चाहते हो।''

सुभाष अजनबी आँखों से भौंचक उसे देखता रह गया।

❐ ❐ ❐

''कहाँ गई थी शालिनी ?''

''डाक्टर के पास।''

''क्यों ? तबियत तो ठीक है ?''

''हाँ !''

''फिर जाने की वजह ?''

''चेकअप के लिए गई थी।''

''कोई खास बात है क्या ?''

''हाँ ! मेरे पूरे शरीर में तुम्हारे आरोपित नाम का जहर फैलता जा रहा है। मैं बहुत बेचैनी महसूस कर रही हूँ सुभाष, मैं वैसी माँ बनना नहीं चाहती जिसने उस क्षण को जिया ही न हो, जो चरम कहलाता है। फिर जो स्त्री होने की सार्थकता को अपने भीतर एक नासूर की तरह पाल रही हो। मैं व्यभिचार के इस दंश से मुक्त होना चाहती हूँ सुभाष – मैं ऐसे शिशु को जन्म नहीं दे सकती जो मात्र एक पुरुष के भीतर की उष्णता हो और कुछ भी नहीं ।''

''शालिनी, तुम पागल तो नहीं हो गई हो ! क्या एक पति अपनी पत्नी से व्यभिचार करता है ? क्या भारतीय संस्कृति में वैवाहिक संबंध एक व्याभिचारिक दृष्टांत है ? तब तो भारत का हर बच्चा व्यभिचार से उत्पन्न अनचाही संतान है। हर माँ को उसके गर्भ में ही उसका गला घोंट देना चाहिए ,क्यों ?''

शालिनी एक असह्य पीड़ा से बिलबिला उठी – ''चुप करो सुभाष ! अपनी ओछी घृणित मानसिकता से बाहर आकर देखो – मेरे भीतर झाँको – इस बियावान में एक टेर बनी किसे हेर रही है सदियों से एक अभिशप्त नारी ? बोलो सुभाष ! माँ, बहन, बेटी, पत्नी और प्रेयसी के रूप में जो नारी इस धरती पर जन्म देने से लेकर जीवनपर्यन्त कई रूपों में तुम्हें पूर्ण और समर्थ बनाती है – उसे इन रिश्तों से पृथक कभी तुमने कुछ और भी महसूसा है ? रिश्तों से इतर उसका कोई नाम, कोई चेहरा तुम्हें कभी क्यों नहीं दिखाई देता सुभाष ?'' एक क्षण रुककर शालिनी ने बहुत निरीह और कातर स्वर में कहा –''मैं रिश्तों में जीवित नहीं रहना चाहती सुभाष – मैं अनुभूतियों में बसना चाहती हूँ – उस 'क्षण' को जीना चाहती हूँ, जो तुम्हारे भीतर के 'अहम' और मेरे अंदर की इस दारुण पीड़ा से भी बड़ा है – शाश्वत है, चिरंतन है – मोक्ष का विराम है वह क्षण। अपने गर्भ में मैं उसी क्षण को रूपायित करना चाहती हूँ, सुभाष – किसी आरोपित नाम को नहीं। काश, तुम जान पाते मेरे भीतर के इस हाहाकार को।''

शालिनी फूट–फूट कर रो पड़ी। सुभाष हैरान और परेशान–सा उसे देखता रहा – क्या स्त्री सृष्टि की सबसे जटिल ग्रंथि है ?

❐ ❐ ❐ ❐ ❐

''मिसेज भाटिया, आपने कुछ सुना ? शालिनी हॉस्पिटल में एडमिट है। सुना है, उसने अपना एबार्शन करा लिया है।''

मिसेज वर्मा की इस सूचना पर मिसेज भाटिया एकबारगी चौंक गईं – ''अरे उसने ऐसा क्यों किया – पहला बच्चा था – इतनी पढ़ी–लिखी समझदार लड़की यह क्या कर गई ?''

मिसेज वर्मा ने एक और तीर छोड़ा –''मुझे तो पहले ही शक था – यह लड़की हसबैंड के साथ एडजस्ट नहीं कर रही है – देखा नहीं आपने, उस दिन अपने पति के प्रोमोशन की पार्टी में वह कैसी तटस्थ–सी थी – सुभाष का सारा अटेंशन उसी की तरफ था। जरूर दोनों के बीच कुछ हुआ था उस दिन ––––––।''

''आप तो बेकार में शक करती हैं मिसेज वर्मा – बहुत थक गई थी बेचारी, इसलिए हँस बोल नहीं रही थी।''

''देखिए मिसेज भाटिया, बीस वर्षों की गृहस्थी का अनुभव है मुझे – मैं एक नजर में भाँप सकती हूँ, किस घर में कहाँ उथल–पुथल है – समझीं आप ?'' उस दिन मनीषा के 'मैरेज डे' पर मेरे सामने ही उसने कहा था – ''शादी की वर्षगाँठ क्या इतनी धूमधाम से मनाने की चीज है ? अपने सर्वनाश पर स्त्रियाँ इतना बड़ा जश्न क्यों मनाती हैं ?'' मनीषा तो खिलखिलाकर हँस पड़ी थी पर शालिनी की आँखें तरल थीं।

''छोड़िए, इन बातों को मिसेज वर्मा, हमें शालिनी को देखने अस्पताल चलना चाहिए। उस लड़की के लिए पता नहीं क्यों मन में बहुत प्यार और आदर है। बड़ी सुरुचिसंपन्न, वेल बिहेव्ड लड़की है। क्यों ऐसी बेवकूफी कर गई, समझ में नहीं आता।'' मिसेज भाटिया के स्वर में अपनेपन का दर्द था।

उसके स्वर की आर्द्रता का प्रभाव मिसेज वर्मा पर नहीं पड़ा। वह कुछ उपेक्षित भाव से बोलीं – ''देखना क्या है उसे, खुद का करा कराया है सब कुछ – नियति की मार तो है नहीं कि जाकर कुछ सांत्वना दें। बेचारा सुभाष, कैसा लगा होगा उसे ? कैसी निर्लज्ज लड़की है – छीः।?''

❐ ❐ ❐ ❐ ❐

''वैरी सॉरी, मिस्टर देशमुख, मुझे न चाहते हुए भी आपकी पत्नी का केस हैंडिल करना पड़ा। कल वह जिस तरह विक्षिप्त अवस्था में मेरे पास आई थी, उसे देखकर मैं आवाक् रह गई। आपकी फैमिली डाक्टर होने के कारण पहले मैंने उसे समझाने की बहुत कोशिश की पर उसने सबके अंत में बस एक ही वाक्य कहा कि – ''अगर आप मुझे इस दंश से मुक्त नहीं कर सकतीं तो मैं अपने आप को खत्म कर लूँगी। मैंने फोन पर आपसे संपर्क करने की कोशिश की तो पता चला कि आप टूर पर बाहर गए हैं। देन आई हैब टू ऑपरेट हर बिकॉज हर कंडिशन वाज सो क्रिटिकल। उसने गर्भ गिराने की दवा खा ली थी – आई हैव टू सेव हर लाइफ एट एनी कास्ट।''

सुभाष ने पागलों की तरह चीख कर कहा –''हाउ डिड शी डेयर टू किल माई चाइल्ड (उसने मेरे बच्चे को मार डालने का साहस किया ?) मैं उसे मार डालूँगा डाक्टर – शी हैज टार्चर्ड मी।''

डॉ० हर्षा ने सुभाष की दोनों बाँहें थामकर उसे संयत करने का प्रयास किया – ''रिलेक्स मि० देशमुख, यह टेंस होने का समय नहीं है। आप अपने को संभालिए प्लीज।'' ठंडे पानी का एक गिलास उसकी ओर बढ़ाते हुए डा० हर्षा ने कहा।

थोड़े समय के अंतराल के बाद डॉक्टर ने ही चुप्पी तोड़ी –''मि० देशमुख, मुझे पूछना तो नहीं चाहिए, पर एक दोस्त की हैसियत से मैं एक बात आपसे पूछना चाहती हूँ। आखिर आपके बीच ऐसी टेंशन का कारण क्या है ? शालिनी को विगत चार वर्षों से आपके साथ देख रही हूँ। ऐसी सुन्दर, सुशील, पढ़ी–लिखी, कलर्च्ड लड़की अचानक ऐसी विस्फोटक कैसे हो गई ? मैंने तो उसे कभी जोर भी से बोलते नहीं सुना।''

''डॉक्टर, मैं स्वयं नहीं जानता वह किस धातु की बनी है। मैंने उसे हमेशा वह सबकुछ दिया जिसे पाकर कोई भी स्त्री खुश और संतुष्ट रह सकती है पर पता नहीं इसकी मानसिक संरचना कैसी है – यह पति पत्नी के संबंध को भी व्यभिचार और बलात्कार की तरह महसूसती है। पता नहीं जीवन से वह कौन–सा क्षण छीनना चाहती है, उसे अपने भीतर आकार देना चाहती है – आई कुड नेवर अंडरस्टैड इट।

''कभी–कभी तो मुझे लगता है कहीं से असामान्य भी है – बिलकुल तटस्थ और अशरीरी। पत्नी के रूप में जिसे पाकर भी मैं पा नहीं सका हूँ। एक डॉक्टर के रूप में आप मेरी स्थिति बखूबी समझ सकती हैं कि हाउ कुड आई बियर ऑल दिस। आप ही सोचिए, उसका यह कितना बड़ा दुःसाहस है कि मेरे पीछे मेरे आगत शिशु की निर्मम हत्या करके भी वह बिना किसी अपराध भाव के बेशर्मी से मेरे सामने जीवित है – क्या ऐसी स्त्री को मैं दुबारा संरक्षण दे सकता हूँ ? बोलो डॉक्टर ! हाउ केन आई टॉलरेट हर।'' आवेश के कारण सुभाष का पूरा शरीर थर–थर काँप रहा था, आँखें पलाश के फूल की तरह आरक्त हो गई थीं।

वे आँखें डॉक्टर हर्षा के भीतर नश्तर की तरह उतरती चली गईं जिसकी चुभन से भीतर का कोई पुराना

नासूर फट गया। असह्य पीड़ा से बिलबिलाकर डॉ० हर्षा चीख पड़ीं – ''बस कीजिए मि० देशमुख, अब और कहने की जरूरत नहीं। जहाँ सागर को सोख लेने की प्यास हो वहाँ शबनम की एक बूँद कोई मायने नहीं रखती। काश, आप समझ पाते किसी स्त्री के इस दारुण प्यास को।''

सुभाष इस चोट से तिलमिला गया, जैसे किसी ने उसके जलते जख्म पर गर्म तेल की बूँदें टपका दी हों।

''ओह डॉक्टर, तो आप भी उसी की पक्षधर है। तो मेरा भी निर्णय सुन लीजिए मैडम, हॉस्पिटल से डिस्चार्ज होकर वह जहाँ चाहे जाए पर मेरे घर के दरवाजे पर हरगिज दस्तक न दे – उससे कह दीजिएगा। वरना धक्के मारकर बाहर निकाल दूँगा। ''

हर्षा के भीतर कहीं एक निःशब्द धमाका हुआ। वह अंदर तक हिल गई। कुछ कहने के लिए उसने मुँह खोला ही था कि अंदर के कमरे से लड़खड़ाते कदमों से शालिनी बाहर निकल आई और उत्तेजना में बाहर जाते हुए सुभाष को पुकार कर उसने बहुत संयमित स्वर में कहा –''ठहरो सुभाष, जिस बंद दरवाजे को खोलने के प्रयास में मैंने अपने मातृत्व तक को दाँव पर लगा दिया, उस लौह कपाट पर दुबारा सिर पटकने मैं फिर आऊँगी – ऐसा तुमने सोच कैसे लिया ? तुम्हारे आरोपित नाम के दंश से मुक्त होकर मैं अब वह स्त्री देह नहीं जिसे संरक्षण की जरूरत है। अब मैं स्वयं अपने–आपको संरक्षण दे सकती हूँ। तुम अपनी सोचो सुभाष – तुम्हारे आहत अभिमान को संरक्षण देने वाली, फिर कोई स्त्री ही होगी – जाओ और तुष्ट करो अपने खंडित अहं को उस लौह कपाट के भीतर।''

हर्षा ने महसूस किया – सुभाष का संपूर्ण अस्तित्व शालिनी के चारों ओर चीथड़ों में बिखर गया है।

□ □ □

प्रकाशित – दोआबा, दिसम्बर 2007